KHAN GLOBAL STUDIES
KGS Campus, Sai Mandir, Musallahpur Hatt, Patna - 6
Mob : 8877918018, 875735880
BPSC - Polity
By : Karan Sir

# न्यायपालिका

**शक्ति पृथक्करण क्या है?**

- शक्ति पृथक्करण के सिद्धांत को मोंटेस्क्यू ने दिया था। इसके अनुसार शक्तियों के पृथक्करण से स्वतंत्रता की सबसे प्रभावी ढंग से रक्षा होती है।
- यह लोकतांत्रिक सरकार की विशेषता है।
- यह प्रणाली राज्य की संस्थाओं को तीन शाखाओं विधायी, कार्यकारी और न्यायिक शाखा में विभाजित करती है और प्रत्येक को अलग-अलग कार्य पूरा करने की शक्ति प्रदान करती है।
- विभिन्न शाखाओं और उनके संस्थानों को इस प्रकार कार्य सौंपे गए हैं कि उनमें से प्रत्येक दूसरे द्वारा शक्ति के प्रयोग की जाँच कर सके। परिणामस्वरूप, कोई भी शाखा इतनी शक्तिशाली नहीं बन सकती कि वह व्यवस्था को पूरी तरह नियंत्रित कर सके।

**शक्ति पृथक्करण की आवश्यकता क्यों है?**

☞ जब भी सत्ता का संकेंद्रण एक केंद्र/ सत्ता में होता है, तो कुप्रशासन, भ्रष्टाचार, भाई-भतीजावाद और सत्ता के दुरुपयोग की संभावना अधिक होती है। यह सिद्धांत यह सुनिश्चित करता है कि लोकतांत्रिक व्यवस्था में निरंकुशता प्रवेश न कर सके। यह नागरिकों को मनमाने शासन से बचाता है। शक्ति पृथक्करण की आवश्यकता को निम्न बिन्दुओं के संदर्भ में देखा जा सकता है-

- शक्ति का पृथक्करण सिद्धांत का मूल कारण व्यक्तिगत स्वतंत्रता की रक्षा करना है।
- यह शक्ति (शासन की वैधता) को निरंकुश होने से बचाता है।
- यह विकेन्द्रीकरण को बढ़ावा देता है। विकेन्द्रीकरण लोकतंत्र के आधारभूत स्तम्भों में एक है।
- न्याय, स्वतंत्रता, समानता जैसे आदर्शों की स्थापना का मार्ग प्रशस्त होगा।
- शक्ति के पृथकरण का सिद्धांत कार्य के भार को कम करता है जिससे दक्षता में वृद्धि होती है। यह सुशासन को भी बेहतर करता है। इस प्रकार यह एक कुशल प्रशासन बनाने में मदद करता है
- सरकार से संबंधित विभिन्न कार्यों को करने के लिए अलग-अलग प्रकार की योग्यताओं की आवश्यकता होती है। शक्ति का पृथक्करण इस आवश्यकता को भी कम कर देता है।
- न्यायपालिका की स्वतंत्रता कायम है।
- विधायिका को मनमाना या असंवैधानिक कानून बनाने से रोकता है

**शक्ति पृथक्करण सिद्धांत का महत्व**

☞ शक्तियों के पृथक्करण सिद्धांत के महत्व को निम्नानुसार संक्षेपित किया जा सकता है-

**शक्ति संकेंद्रण:**

☞ शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का क्षरण एक हाथ (व्यक्ति) में शक्ति के केंद्रीकरण को रोकने की कोशिश करता है क्योंकि इतिहास ने बार-बार प्रदर्शित किया है कि इससे विनाशकारी परिणाम हो सकते हैं।

**पारदर्शिता:**

☞ इस सिद्धांत का अनुप्रयोग सरकार को अपने कार्यों के लिये अपने नागरिकों के प्रति उत्तरदायी और जवाबदेह बनाता है जिससे मानवाधिकारों के प्रचार और संरक्षण में सहायता मिलती है।

**अन्य प्रशासनों का उन्मूलन:**

☞ सत्ता का पृथक्करण प्रशासन के अन्य रूपों जैसे- राजशाही या तानाशाही की सबसे गंभीर कमजोरियों में से एक को समाप्त करता है जिसमें राजा अपने लोगों के प्रति जवाबदेह नहीं होता है।

**प्राकृतिक न्याय:**

☞ निम्नलिखित सिद्धांत सरकार के अंदर विभिन्न भागों का एक संतुलन बनाता है जिसमें सरकारी निकायों के कार्यों को एक दूसरे से अलग रहते हुए एक दूसरे द्वारा नियंत्रित किया जाता है, यह आश्वासन देता है कि कानून उचित हैं और प्राकृतिक न्याय का पालन करते हैं।

**भारतीय संविधान में शक्ति पृथक्करण**

☞ शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत संविधान की मूल संरचना का एक हिस्सा है, हालांकि इसका विशेष रूप से उल्लेख नहीं किया गया है। विधायिका इस सिद्धांत का उल्लंघन करने वाला कोई कानून पारित नहीं कर सकती।

भारतीय संविधान में इसका उल्लेख कई जगह दिया गया हैं-

- **अनुच्छेद 50:** यह अनुच्छेद राज्य पर न्यायपालिका को कार्यपालिका से अलग करने का दायित्व डालता है। लेकिन, चूंकि यह राज्य के नीति निदेशक सिद्धांतों के अंतर्गत आता है, इसलिए इसे लागू नहीं किया जा सकता है।

- **अनुच्छेद 123:** राष्ट्रपति, देश के कार्यकारी प्रमुख होने के नाते, कुछ शर्तों में विधायी शक्तियों का प्रयोग (अध्यादेश प्रख्यापित) करने का अधिकार रखते हैं।
- **अनुच्छेद 121 और 211:** इनमें प्रावधान है कि विधायिका सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के आचरण पर चर्चा नहीं कर सकती। वे ऐसा केवल महाभियोग की स्थिति में ही कर सकते हैं।
- **अनुच्छेद 361:** राष्ट्रपति और राज्यपालों को अदालती कार्यवाही से छूट प्राप्त है।

**न्यायिक समीक्षा का अर्थ**

- न्यायिक समीक्षा विधायी अधिनियमों तथा कार्यपालिका के आदेशों की संवैधानिकता की जाँच करने हेतु न्यायपालिका की शक्ति है जो केंद्र एवं राज्य सरकारों पर लागू होती है।
- भारत में सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालयों को किसी भी कानून की संवैधानिकता की जाँच करने की शक्ति प्राप्त है और यदि ऐसा कानून संविधान के प्रावधानों के साथ असंगत पाया जाता है, तो अदालत कानून को असंवैधानिक घोषित कर सकती है।
- अधीनस्थ न्यायालयों के पास कानूनों की संवैधानिकता की समीक्षा करने की शक्ति नहीं है।

**न्यायिक समीक्षा का महत्त्व**

☞ न्यायिक समीक्षा का निम्नलिखित महत्त्व हैं जिसे बिन्दुवार देशाया गया है-

- यह संविधान की सर्वोच्चता बनाए रखने के लिये आवश्यक है।
- विधायिका और कार्यपालिका द्वारा सत्ता के संभावित दुरुपयोग की जाँच करने के लिये आवश्यक है।
- यह लोगों के अधिकारों की रक्षा करता है।
- यह संघीय संतुलन बनाए रखता है।
- यह न्यायपालिका की स्वतंत्रता को सुरक्षित करने के लिये आवश्यक है।
- यह अधिकारियों के अत्याचार को रोकता है।

**न्यायिक समीक्षा के संवैधानिक प्रावधान**

- किसी भी कानून को अमान्य घोषित करने के लिये न्यायालयों को सशक्त बनाने संबंधी संविधान में कोई भी प्रत्यक्ष अथवा विशिष्ट प्रावधान नहीं है, लेकिन संविधान के तहत सरकार के प्रत्येक अंग पर कुछ निश्चित सीमाएँ लागू की गई हैं, जिसके उल्लंघन से कानून शून्य हो जाता है।
- न्यायालय को यह तय करने का कार्य सौंपा गया है कि संविधान के तहत निर्धारित सीमा का उल्लंघन किया गया है अथवा नहीं है।

**न्यायिक समीक्षा की प्रक्रिया का समर्थन करने संबंधी कुछ विशिष्ट प्रावधान**

- **अनुच्छेद 372 (1):** यह अनुच्छेद भारतीय संविधान के लागू होने से पूर्व बनाए गए किसी कानून की न्यायिक समीक्षा से संबंधित प्रावधान करता है।
- **अनुच्छेद 13:** यह अनुच्छेद घोषणा करता है कि कोई भी कानून जो मौलिक अधिकारों से संबंधित किसी प्रावधान का उल्लंघन करता है, मान्य नहीं होगा।
- अनुच्छेद 32 और अनुच्छेद 226 सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालय को मौलिक अधिकारों का रक्षक एवं गारंटीकर्ता की भूमिका प्रदान करते हैं।
- अनुच्छेद 251 और अनुच्छेद 254 में कहा गया है कि संघ और राज्य कानूनों के बीच असंगतता के मामले में राज्य कानून शून्य हो जाएगा।
- अनुच्छेद 246 (3) राज्य सूची से संबंधित मामलों पर राज्य विधायिका की अनन्य शक्तियों को सुनिश्चित करता है।
- अनुच्छेद 245 संसद एवं राज्य विधायिकाओं द्वारा निर्मित कानूनों की क्षेत्रीय सीमा तय करने से संबंधित है।
- अनुच्छेद 131-136 में सर्वोच्च न्यायालय को व्यक्तियों तथा राज्यों के बीच, राज्यों तथा संघ के बीच विवादों में निर्णय लेने की शक्ति प्रदान की गई है।
- अनुच्छेद 137 सर्वोच्च न्यायालय को उसके द्वारा सुनाए गए किसी भी निर्णय या आदेश की समीक्षा करने हेतु एक विशेष शक्ति प्रदान करता है।

**न्यायिक समीक्षा का लाभ**

न्यायिक समीक्षा की शक्ति यह सुनिश्चित करती है कि-

- नागरिकों की अधिकतम सुरक्षा और उनकी भलाई सुनिश्चित करने के लिए केंद्रीय और राज्य प्रकार की मशीनरी द्वारा कानूनों के कार्यान्वयन और शक्ति के उपयोग पर नियंत्रण हो।
- संघ और राज्य के कानून भी एक-दूसरे से टकरा सकते हैं और यह ऐसे टकराव को रोकता है।
- यह, यह भी सुनिश्चित करता है कि सरकारी निकाय और प्रशासनिक कार्य भ्रष्टाचार के बिना चल रहे हैं।
- यह कानून के न्यायशास्त्र को राष्ट्रीय व्यवस्था के अन्य पहलुओं से ऊपर रखता है और कानून और कार्यकारी प्रबंध न की संभावित खराबी को रोकता है।

**न्यायिक समीक्षा का नकारात्मक प्रभाव**

☞ न्यायिक समीक्षा का नकारात्मक प्रभाव विभिन्न प्रतिस्थानों और परिस्थितियों पर निर्भर कर सकता है। यह विभिन्न प्रकार की प्रणालियों, संरचनाओं और कानूनी प्रणालियों के अनुसार बदल सकता है। निम्नलिखित परिस्थितियों में नकारात्मक प्रभाव हो सकता है क्योंकि:

- **देरी:** न्यायिक समीक्षा में देरी नकारात्मक प्रभाव डाल सकती है, क्योंकि इससे व्यक्ति या संस्था को न्याय दिलाने में समय लगता है, जिससे व्यक्ति को अनुचित हानि हो सकती है।
- **विश्वास:** यदि लोग न्यायिक प्रक्रिया में विश्वास नहीं रखते हैं, तो इसका नकारात्मक प्रभाव हो सकता है। यह समझा जा सकता है कि न्यायिक प्रणाली अन्यथा समान न्याय नहीं करती है या भ्रष्ट है।
- **सामाजिक प्रभाव:** न्यायिक समीक्षा के नकारात्मक प्रभाव का कारण समाज में असमानता, अन्याय, या भ्रष्टाचार की भावना हो सकती है, जिससे सामाजिक स्थिति और संबंधों में द्विधा हो सकती है।
- **प्रणालीकरण और विशेषाधिकार:** यदि न्यायिक समीक्षा में प्रणालीकरण और विशेषाधिकार का प्रचुर मात्रा में उपयोग हो, तो यह सामाजिक न्याय में नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है, क्योंकि लोग महसूस कर सकते हैं कि न्यायिक प्रणाली न्यायिक नहीं है।
- **सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियाँ:** न्यायिक समीक्षा के नकारात्मक प्रभाव का कारण सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियाँ भी हो सकती हैं। जब लोग महसूस करते हैं कि न्यायिक प्रणाली उनके हित में नहीं है, तो यह नकारात्मक प्रभाव पैदा कर सकता है।

☞ इन प्रभावों के बावजूद, सही और न्यायिक समीक्षा का अभ्युदय सामाजिक समरसता, न्याय, और सत्य की भावना को बढ़ा सकता है और समाज में आत्म- विश्वास को मजबूत कर सकता है।

**सर्वोच्च न्यायलय के निर्णय और 9वीं अनुसूची की समीक्षा**

☞ न्यायिक समीक्षा राज्यों और केंद्र दोनों के मौजूदा कानूनों और संवैधानिक और कार्यकारी संशोधन दोनों के अध्यादेशों पर की जा सकती है। भारतीय संविधान की नौवीं अनुसूची में मौजूद कानूनों की न्यायिक समीक्षा नहीं की जा सकती। सर्वोच्च न्यायालय की व्याख्याओं का देश की प्रत्येक अदालत द्वारा सम्मान किया जाता है और इस प्रकार सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के खिलाफ कोई अपील नहीं होती है।

☞ **शंकरी प्रसाद बनाम भारत संघ मामले** में 1951 के पहले संशोधन अधिनियम को सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष इस आधार पर चुनौती दी जा रही थी कि अधिनियम द्वारा श्संपत्ति का अधि कारश को समाप्त कर दिया गया था और तर्क दिया गया था कि इसे मौलिक अधिकारों के तहत नहीं किया जा सकता है। अनुच्छेद 13 (2), सुप्रीम कोर्ट ने इस दलील को खारिज कर दिया और कहा कि अनुच्छेद 368 की शर्तें पूरी तरह से सामान्य हैं और संसद को बिना किसी अपवाद के संविधान में संशोधन करने का अधिकार देती हैं।

☞ गोलकनाथ बनाम पंजाब राज्य के ऐतिहासिक मामले में तीन संवैधानिक संशोधनों को चुनौती दी गई थी। इसमें सर्वोच्च न्यायालय ने अपने फैसले को पलट दिया कि अनुच्छेद 368 के तहत संसद के पास हमारे संविधान के तहत गारंटीकृत मौलिक अधिकारों को छीनने या कम करने के लिए संशोधन करने की कोई शक्ति नहीं है। सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि-

- अनुच्छेद 368 केवल संविधान में संशोधन के संबंध में पालन की जाने वाली प्रक्रिया प्रदान करता है।
- अनुच्छेद 368 में वास्तव में संविधान में संशोधन करने की शक्ति नहीं है
- संविधान में संशोधन करने की शक्तियाँ अनुच्छेद 245, 246, 248 और संघ सूची की प्रविष्टि 97 से प्राप्त होती हैं।

☞ मिनर्वा मिल्स मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने बहुमत के फैसले से धारा 4 को रद्द कर दिया

☞ 42वां संशोधन अधिनियम जिसने हमारे संविधान के अनुच्छेद 24, 19, 31 पर निदेशक सिद्धांतों को शक्ति प्रदान की। चूँकि यह भारतीय संविधान के सामंजस्य को नष्ट कर देगा और कहा गया कि हमारे संविधान का भाग III और IV समान रूप से महत्वपूर्ण हैं और एक की दूसरे पर पूर्ण प्रधानता स्वीकार्य नहीं है।

**आईटी अधिनियम धारा 66 (ए)**

☞ 2015 में, SC ने संशोधित सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000 की धारा 66 (ए) को रद्द कर दिया। इसमें कंप्यूटर या मोबाइल फोन या टैबलेट जैसे किसी अन्य संचार उपकरण के माध्यम से 'आक्रामक' संदेश भेजने के लिए सजा का प्रावधान किया गया था। दोषी पाए जाने पर अधिकतम तीन साल की जेल और जुर्माना हो सकता है। इसे SC ने इस आधार पर निरस्त कर दिया था कि यह धारा संविधान के अनुच्छेद 19 (2) के अंतर्गत आती है, जो अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता से संबंधित है।

**न्यायिक सक्रियता**

☞ न्यायिक सक्रियता उन न्यायिक निर्णयों को प्रकट करती है जिन पर विद्यमान विधि के बजाय व्यक्तिगत या राजनीतिक विचारों पर आधारित होने का संदेह है। न्यायाधीशों से अपेक्षा की जाती है कि वे निर्णय देते समय विधि की व्याख्या संविधान के अनुसार करें।

**न्यायिक सक्रियता का अर्थ**

- न्यायिक सक्रियता नागरिकों के अधिकारों की रक्षा में न्यायपालिका की सक्रिय भूमिका को दर्शाती है।
- न्यायिक सक्रियता का सामान्य तात्पर्य है कि न्यायपालिका अपने शक्ति पृथक्करण के दायरे से बहार निकल कर कार्य करती है।
- ऊपर दिए गए इस चार्ट में भारत और अमेरिका में के मध्य न्यायिक सक्रियता बनाम शक्ति के संतुलन को दर्शाया गया है।

शक्ति संतुलन

न्यायिक सक्रियता

**न्यायिक संयम**

☛ यह न्यायिक सक्रियता के विपरीत है जो अपने कर्तव्यों को लागू करते समय संवैधानिक कानूनों का पालन करने के लिए उस पर दायित्व डालता है। यह न्यायपालिका को संविधान में निर्धारित कानूनों या नियमों का सम्मान करने के लिए प्रोत्साहित करता है।

**न्यायिक सक्रियता बनाम न्यायिक संयम**

☛ न्यायिक सक्रियता बनाम न्यायिक संयम को एक तालिका के माध्यम से दर्शाया गया हैं-

**न्यायिक सक्रियता बनाम न्यायिक संयम**

| क्र.सं. | न्यायिक सक्रियता | न्यायिक संयम |
|---|---|---|
| 1. | न्यायिक सक्रियता समकालीन मूल्यों और परिदृश्यों की पैरोकारी के लिये संविधान की व्याख्या है। | न्यायिक संयम किसी विधि को निरस्त करने की न्यायाधीशों की शक्तियों को सीमित करता है। |
| 2. | व्यक्तिगत अधिकारों की सुरक्षा, नागरिक अधिकारों, सार्वजनिक नैतिकता और राजनीतिक भेदभाव जैसे विषयों पर सामाजिक नीतियों को आकार देने में न्यायिक सक्रियता की अहम भूमिका है। | न्यायिक संयम के साथ, उसी न्यायपालिका को कार्यपालिका का पालन करना पड़ता है जिसे जनता के लिए कानून बनाने की एकमात्र शक्ति दी जाती है। |
| 3. | न्यायिक सक्रियता कुछ अधिनियमों या निर्णयों को निरस्त करने की शक्ति प्रदान करता है। उदाहरण के लिये उच्चतम न्यायालय या अपीलीय न्यायालय पूर्व के निर्णयों को पलट सकते हैं यदि वे दोषपूर्ण हों। यह न्यायिक प्रणाली नियंत्रण और संतुलन का भी कार्य करती है और सरकार के तीनों अंगों- न्यायपालिका, कार्यपालिका और विधायिका को असीमित शक्तिशाली बनने से रोकती है। | न्यायिक संयम सरकार के तीनों अंगों- न्यायपालिका, कार्यपालिका और विधायिका के बीच संतुलन बनाए रखने में सहायता करता है। न्यायिक संयम के मामले में न्यायाधीश और न्यायालय प्रवर्तित विधियों को संशोधित करने के बजाय उनकी समीक्षा को प्रोत्साहित करते हैं। |
| 4. | न्यायिक संयम में न्यायाधीश संविधान निर्माताओं की मूल मंशा पर के परे जाकर विचार करते हैं | न्यायिक संयम में न्यायाधीश संविधान निर्माताओं की मूल मंशा पर विचार करते हैं |
| 5. | – | न्यायिक संयम का दृष्टिकोण रखने वाले न्यायाधीश अपने निर्णयन में विधि निर्माताओं (Legislatures) के उद्देश्यों व अधिनियम की भाषा पर विचार करते हैं और संविधान की मूल भाषा में परिवर्तन का अवसर केवल संविधान संशोधन के आधार पर देते हैं। |
| 6. | – | न्यायिक संयम में न्यायालय संसद और राज्य विधानमंडलों के सभी विधानों की पुष्टि करता है यदि वे देश के संविधान का उल्लंघन नहीं कर रहे हैं। न्यायिक संयम में न्यायालय सामान्यत: संसद या किसी अन्य संवैधानिक निकाय द्वारा प्रस्तुत संविधान की व्याख्याओं |

**न्यायिक सक्रियता के कारण**

- विधायिका की स्थिरता
- व्यापक लोगों में समझ की कमी
- सामाजिक विवाद की समस्या
- PIL की बढ़ती स्वीकार्यता
- अनुच्छेद 21 का विकास लोगों की अधिकारों की रक्षा

**न्यायिक सक्रियता के उत्प्रेरक**

☞ न्यायिक सक्रियता के उत्प्रेरक कारकों में निम्लिखित प्रकार के सामाजिक/मानवाधिकार कार्यकर्ताओं को रेखांकित किया गया हैं-

- **नागरिक अधिकार कार्यकर्त्ता**- ये समूह मुख्यत: नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों से जुड़े मामले उठाते है।
- **जन अधिकार कार्यकर्त्ता**- ये समूह सामाजिक एवं आर्थिक अधिकारों पर जनांदोलन का राज्य द्वारा दमन की स्थिति में जोड़ देते है।
- **उपभोक्ता अधिकार कार्यकर्त्ता**- यह समूह राजनीति एवं आर्थिक व्यवस्था की जवाबदेही के ढांचे में उपभोक्ता अधि कार संबंधी मामले उठाते है।
- **बंधुआ मजदूर समूह**- यह समूह भारत में मजदूरी दासता के उन्मूलन के लिए न्यायिक सक्रियता की अपेक्षा करते है।
- **पर्यावर्णीय कारवाही के लिए नागरिक**- यह समूह न्यायिक सक्रियता को बढ़ते पर्यावरणीय गिरावट तथा प्रदुषण को समाप्त करने के लिए उत्प्रेरित करते है।
- **वृहत सिचाई परियोजनाओं के विरुद्ध नागरिक समूह**- इन कार्यकर्ताओं को भारत की न्यायपालिका से यह अपेक्षा होती है कि वह वृहत सिचाई परियोजनाओं को रोक दे, जो की दुनिया की किसी भी न्यायपालिका के लिए असंभव है।
- **बाल अधिकार समूह**- ये लोग बल श्रम शिक्षा-साक्षरता का अधिकार, सुधार गृहों के किशोरों तथा यौन श्रमिकों के बच्चों के अधिकारों से संबंधित मामलों को उठाते है।
- **हिरासती या परिरक्षण अधिकार समूह**- इनमें कैदियों के अधिकार, राज्य के संरक्षण परिरक्षण या हिरासत में महिलाएं तथा निवारक बंदीकरण से प्रभावित व्यक्तियों के लिए की जाने वाली सामाजिक कार्यवाईया शामिल है।
- **निर्धनता अधिकार समूह**- यह समूह सूखे एवं अकाल के दौरान सहायता तथा शहरी गरीबों के मामलों को न्यायलय तक लाते है।
- **मूलवासी जनाधिकार समूह**- यह समूह वनवाशियों, संविधान की 5 वीं एवं 6 वीं अनुसूचियों के नागरिको तथा अस्मिता संबंधी अधिकारों के लिए कार्य करते है।
- **महिला अधिकार समूह**- यह समूह लैंगिक समानता, लिंग आधारित हिंसा एवं उत्पीडन, बलात्कार तथा दहेज हत्या जैसे मामले पर आंदोलन करते है।
- **बार आधारित समूह**- यह समूह भारतीय न्यायपालिका की स्वायतता तथा जवाबदेही संबंधी मुद्दों के लिए आंदोलन करते है।
- **मीडिया स्वायतता समूह**- यह समूह प्रेस के साथ ही राज्य के स्वामित्व वाले जन माध्यमों की स्वायतता एवं जवाबदेही पर एकाग्रह रहते है।
- **वर्गीकृत अधिवक्ता आधारित समूह**- इस कोटि में प्रभावशाली वकीलों के समूह आते है जो विभिन्न मुद्दों के लिए आंदोलन करते है।
- **वर्गीकृत व्यैक्तिक आवेदन याचिकाकर्ता**- इसके अंतर्गत स्वतंत्र कार्यकर्त्ता आते है।

**न्यायिक सक्रियता के प्रभाव**

☞ न्यायिक सक्रियता, जिसे अक्सर न्यायिक उपचार भी कहा जाता है, का सकारात्मक और नकारात्मक प्रभाव विभिन्न प्रतिस्थानों और परिस्थितियों पर निर्भर करता है।

**सकारात्मक प्रभाव**-

☞ न्यायिक प्रणाली की विश्वासनीयता: सक्रिय न्यायिक समीक्षा से लोगों में न्यायिक प्रणाली के प्रति विश्वास बढ़ सकता है। यह समझाता है कि न्यायिक प्रक्रिया उच्च मानकों और न्यायिक इलाहाबद के तत्वों का पालन कर रही है।

☞ **अधिकारिक समाप्ति:** सक्रिय न्यायिक सक्रियता से मामलों का तीव्रता से और अधिकारिक रूप से समाप्त हो सकता है, जिससे न्यायिक प्रणाली की ताकत बढ़ती है और लोगों के बीच विश्वास पैदा होता है।

☞ **सामाजिक समाधान:** न्यायिक सक्रियता से लोगों को अपने विवादों को समाधान करने के लिए एक स्थान प्राप्त होता है, जिससे समाज में शांति बनी रहती है और सामाजिक समरसता में सुधार होता है।

**नकारात्मक प्रभाव**

☞ **विवाद और अविश्वास:** यदि न्यायिक सक्रियता में कोई असमर्थता या भ्रष्टाचार हो, तो यह लोगों के बीच विवाद और अविश्वास का कारण बन सकता है।

☞ **अधिक समय लेना:** अगर न्यायिक सक्रियता देर से होती है, तो इससे लोगों का आत्म-विश्वास और विश्वास कम हो सकता है, क्योंकि वह न्याय प्राप्त करने में समय लग रहे हैं।

☞ **न्यायिक अस्तित्व में कमजोरी:** न्यायिक सक्रियता का नकारात्मक प्रभाव यह भी हो सकता है कि यह न्यायिक अस्तित्व में कमजोरी पैदा कर सकता है, जिससे न्यायिक प्रणाली को लोगों के बीच कमजोर बना सकता है।

☞ **सामाजिक असहमति:** यदि न्यायिक सक्रियता में समस्याएं होती हैं, तो इससे सामाजिक असहमति पैदा हो सकती है और लोग न्याय प्रणाली के प्रति आपसी विश्वास खो सकते हैं।

**न्यायिक सक्रियता से संबंधित सर्वोच्च न्यायलय के निर्णय**

- न्यायिक सक्रियता से सम्बंधित उच्चतम न्यायलय ने कई मामलों में निर्णय दिया है-
- **केशवानंद भारती मामला (वर्ष 1973)**- भारत के शीर्ष न्यायालय ने घोषणा की कि कार्यपालिका को संविधान के मूल ढाँचे में हस्तक्षेप करने और छेड़छाड़ करने का कोई अधिकार नहीं है।
- **शीला बरसे बनाम महाराष्ट्र राज्य (वर्ष 1983)**- इस मामले में एक पत्रकार द्वारा जेल में महिला कैदियों की हिरासत के दौरान हिंसा के संबंध में एक पत्र के माध्यम से सर्वोच्च न्यायालय को सूचित किया गया। न्यायालय ने उस पत्र को एक रिट याचिका के रूप में माना और मामले का संज्ञान लिया।
- **आई.सी. गोलकनाथ एवं अन्य बनाम पंजाब राज्य और अन्य (वर्ष 1967)**- सर्वोच्च न्यायालय ने घोषणा की कि भाग 3 में निहित मौलिक अधिकार इम्यून और इन्हें विधानसभा द्वारा संशोधित नहीं किया जा सकता है।
- **हुसैनारा खातून (1) बनाम बिहार राज्य (वर्ष 1979)**- एक समाचार पत्र में प्रकाशित लेखों के माध्यम से विचाराधीन कैदियों के खिलाफ अमानवीय और बर्बरता की स्थिति पर प्रकाश डाला गया। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत, शीर्ष अदालत ने इसे स्वीकार किया और माना कि त्वरित सुनवाई का अधिकार एक मौलिक अधिकार है।
- **ए.के. गोपालन बनाम मद्रास राज्य (वर्ष 1950)**- भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने इस तर्क को खारिज कर दिया कि किसी व्यक्ति को उसके जीवन या स्वतंत्रता से वंचित करने के लिये न केवल कानून द्वारा निर्धारित प्रक्रिया का पालन किया जाना चाहिये, बल्कि यह भी कि ऐसी प्रक्रिया निष्पक्ष एवंउचित होनी चाहिये।

**बिहार तथा भारत के कुछ संबंधित विवाद एवं निर्णय**

**भागलपुर जेल कैदी विवाद**

- हिंगो रानी ने भागलपुर जेल में बंद कैदियों के कार्यवाही के लिए सर्वोच्च न्यायलय अवगत कराया जिसमें बिना किसी जुर्म के उन्हें रखा गया था।

**पर्यावरण सम्बन्धी विवाद**

- ताजमहल की क्षरण को रोकने के लिए निर्णय
- दिल्ली में smart smog tower लगाने के लिए
- पटाखे बैन करने के लिए

**सामाजिक क्षेत्र**

- सबरीमाला विवाद में व्यापक सक्रियता
- विशाखा गाइड लाइन को जरी करना
- सड़क किनारे शराब की बिक्री बंद
- सिनेमा हॉल में राष्ट्रगान अनिवार्य
- ऑक्सीजन सप्लाई और वैक्सीन सप्लाई के लिए निर्णय

**पुट्टूस्वामी वादः 2017**

- अनुच्छेद 21 निजता के अधिकार द्वारा संरक्षण की कवायद करना

**श्रेया सिंघल वादः 2011**

- आईटी अधिनियम 66। के दुरूपयोग द्वारा अपराधियों को पकड़ना

❑❑❑

KHAN GLOBAL STUDIES Most Trusted Learning Platform KHAN SIR